ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 189-192
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-I, Issues-X YEAR- June -2018

लोकसाहित्यानुसंधान की प्रविधि

डॉ0 प्रतिष्ठा शर्मा
प्राध्यापक– हिन्दी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म0प्र0), भारत

लोक साहित्य की परम्परा उतनी ही पुरानी है, जितनी पुरानी मनुष्य जाति, किसी भी संस्कृति का सच्चा तथा स्वाभाविक चित्रण लोक साहित्य में उपलब्ध होता है। लोक साहित्य जन–जीवन का वह दर्पण है जिसमें इतिहास प्रेमी ऐतिहासिक तथ्य देख सकते हैं, नीतिशास्त्री नैतिक मूल्यों को, भाषा–शास्त्री अनेक शब्दों, क्रियाओं तथा अन्य बातों को, समाजसुधारक सामाजिक समस्याओं तथा समाज जीवन की सुख–दुख मिश्रित अनुभूतियाँ देख सकते हैं, मानस शास्त्रज्ञ मनोविज्ञान का सर्वेक्षण कर सकते हैं। संक्षेप में हम कह सकते हैं। कि लोक साहित्य ऐसा ज्ञान कोष है जिसमें इतिहास, भूगोल, समाज, धर्म, नीति, भाषा, व्याकरण, कला, संगीत, काव्य आदि लोक जीवन से संबंधित ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। 'लोक' शब्द संस्कृत के 'लोकदर्शने' धातु से घञ् प्रत्यय करने पर निष्पन्न हुआ है। इस धातु का अर्थ देखना होता है। जिसका लट्लकार में अन्य पुरूष एकवचन रूप 'लोकते' है। अतः लोक शब्द का अर्थ हुआ 'देखने वाला'। इस प्रकार वह समस्त जन समुदाय जो इस कार्य को करता है लोक कहलायेगा।"

लोक शब्द के अन्य पर्याय शब्द 'जन' तथा 'ग्राम' हैं, अंग्रेजी में इसका पर्याय शब्द है–'फोक'। डॉ. बार्कर ने 'फोक' शब्द की व्याख्या करते हुए लिखा है कि 'फोक' से सभ्यता से दूर रहने वाली किसी पूरी जाति का बोध होता है। किन्तु यदि इसका विस्तृत अर्थ लिया जाये तो किसी सुसंस्कृत राष्ट्र के सभी लोग इस नाम से पुकारे जा सकते हैं। लोक के सम्बन्ध में कुछ विचारकों ने अपने मत प्रकट किये हैं। डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी "लोक शब्द का अर्थ 'जन–पद' या ग्राम्य नहीं है, बल्कि नगरों और गांवों में फैली हुई वह समूची जनता है जिसके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं हैं ये लोग नगर में परिष्कृत रूचि सम्पन्न तथा सुसंस्कृत समझे जाने वाले लोगों की तुलना में अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं। और परिष्कृत रूचि वाले लोगों की समूची विलासिता और सुकुमारिता को जीवित रखने के लिये जो भी वस्तुएँ आवश्यक होती हैं उनको उत्पन्न करते हैं।"

कृष्णदेव उपाध्यायः आधुनिक सभ्यता से दूर अपने प्राकृतिक परिवेश में निवास करने वाली तथाकथित अषिक्षित एवं असंस्कृत जनता को 'लोक' कहते हैं जिनका आचार–विचार एवं जीवन परम्परायुक्त नियमों से नियंत्रित होता है।" इससे स्पष्टतया ज्ञात होता है कि जो लोग संस्कृत तथा परिष्कृत लोगों के प्रभाव से बाहर रहते हुए अपनी पुरातन स्थिति में वर्तमान हैं, उन्हें लोक की संज्ञा प्राप्त है। डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने लोक साहित्य को लोकगीत (Folk& Lyrics) लोकगाथा (Folk& Baltads) लोककथा (Folk&Tales) लोकनाट्य (Folk& Drama) प्रकीर्ण–साहित्य (Misdilneous Literature) वर्गीकृत किया हैं।

किसी भी देश के शिष्ट साहित्य से पूर्णतया परिचित होने के लिये उसके लोक साहित्य का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक होता है। शिष्ट साहित्य का लोक साहित्य से घनिष्ट सम्बन्ध होता है। वस्तुतः शिष्ट साहित्य लोक साहित्य का ही विकसित, सुसंस्कृत एवं परिष्कृत रूप है। लोक साहित्य का अध्ययन घर पर या पुस्तकालय में बैठकर नहीं किया जा सकता इसके लिये ग्राम, खेत, खलिहान, नदी, बावड़ी, कुआँ आदि स्थानों पर जाना पड़ता है। यह क्षेत्रीय कार्य (Field Work) कहलाता है।

लोकसाहित्य के अनुसंधान का कार्य क्षेत्रीय शोध–विधि के द्वारा किया जाता है। क्षेत्रीय शोध का तात्पर्य है–एक क्षेत्र विशेष को चुनकर उसके साहित्य, को, साहित्यिक धाराओं, उसके लोक साहित्य या बोली रूपों का सर्वेक्षण या वर्णन करना है। 'क्षेत्र' शब्द वस्तुतः विषय के परिसीमन का द्योतक है। किसी भाषा या उसके साहित्य के सम्पूर्ण क्षेत्र को कुछ वैशिष्ट्य या भौगोलिक सीमाओं के आधार पर, विभिन्न उपक्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है। शोधार्थी अपने सर्वेक्षण को सघन और वर्णन को पूर्ण बनाने के लिये किसी भी उपक्षेत्र को चुन सकता है। यदि वह चाहे तो इस उपक्षेत्र को भी और छोटी इकाईयों में बांटकर वहाँ की साहित्यिक स्थिति का विवरण प्रस्तुत कर सकता है। लोक साहित्य के अनुसंधान की प्रविधि में सबसे पहले क्षेत्र सीमा का निर्धारण करना आवष्यक होता हैं। जिसमें चुने गये क्षेत्र की सीमाओं के निर्धारण का प्रश्न उठता हैं। सबसे पहले लोक साहित्य के अनुसंधान के लिये चुने गये क्षेत्र की सीमाओं के निर्धारण का प्रश्न उठता है। यदि किसी क्षेत्र के लोक साहित्य का अध्ययन करना है तो राजनीति या शासकीय दृष्टि से निर्धारित खण्डों को चुना जा सकता है। ये इकाईयों

अनुरूपी लेखक

जिला, तहसील, परगना, या नगरगांव हो सकती है। लोक साहित्य के शोध कार्य के लिये सीमित क्षेत्र का चुनाव सुविधाजनक होता है। सर्वेक्षण और विवरण दोनो ही समय साध्य एवं श्रमसाध्य कार्य हैं। इसलिये छोटे क्षेत्र का चुनाव शोधार्थी के नियंत्रण में रहता है। उसे कितनी अवधि में कार्य करना है। यह अधिक विचारणीय होता है। साथ ही आर्थिक सहायता तथा अन्य सुविधाओं को अपनी क्षमता सुविधा और आर्थिक स्थिति के अनुसार करना चाहिये। क्षेत्र के चुनाव में एक बात ध्यान देने योग्य यह भी है कि जिस क्षेत्र को चुना जा रहा है यदि उस पर उसी प्रकार का कार्य पहले से हो चुका है, तो क्षेत्र का पुनर्निवाचन नहीं करना चाहिये। इस क्षेत्र को उसी हालत में चुना जा सकता है जबकि पूर्ण कार्य के विस्तार की सम्भावना अथवा सुधार एवं संशोधन की आवश्यकता हो और ये स्थितियाँ स्पष्ट हों। क्षेत्र की सम्भावनाओं का ध्यान भी रखना चाहिये। प्रत्येक क्षेत्र का लोक साहियत्य उस क्षेत्र में किसी न किसी रूप में उपलब्ध होता है।

इसके बाद क्षेत्रीय विषय का निर्धारण किया जाता हैं, क्योंकि लोक साहित्यनुसंधान में विषय अपनी विस्मृति में सम्पूर्ण क्षेत्र से भी संबंधित हो सकता है और उसके किसी उपखण्ड से भी। आज के विशेषीकरण के युग में तो क्षेत्र के एक गांव, उस गांव के एक वर्ग उस वर्ग के एक व्यक्ति और उस व्यक्ति के भाषा के भी किसी एक रूप को अनुसंधान का विषय बनाया जा सकता है। जहाँ तक लोक साहित्य का प्रश्न है इसके भी विस्तृत में सीमित विषय हो सकते हैं। समस्त क्षेत्र के लोक साहित्य का अध्ययन भी किया जा सकता है और उसका परिसीमन भी किया जा सकता है।

परिसीमन विषय इस प्रकार हो सकते हैं–

1) लोकगीत साहित्य–

क) किसी देवता विशेष से संबंधित लोकगीत
ख) किसी अनुष्ठान से संबंधित लोकगीत
ग) मनोरंजनात्मक लोकगीत
घ) पुरुषों के लोकगीत
(i) जन्म से संबंधित लोकगीत
(ii) वैवाहिक लोकगीत
(iii) कृषि से संबंधित लोकगीत
च) प्रबंधात्मक लोकगीत
(i) वीर गीत
(ii) प्रेम गीत
(iii) धार्मिक आचरण आदि से संबंधित

2) लोककथा साहित्य–

क) व्रत कथाएँ
ख) कथाओं की रूढ़ियाँ
ग) नीति कथाएँ: पशु पक्षियों के आधार पर तथा अन्य
घ) बुझौवल कहानियाँ आदि

इस प्रकार कई अन्य उदाहरण भी हो सकते हैं जैसे लाकोक्ति एवं कहावतों के आधार पर भी स्वतंत्र रूप से शोध कार्य किया जा सकता है। कभी–कभी ऐसे विषय भी ले लिये जाते हैं जिसमें अनुसंधेय वस्तु का युग्म रहता है। अमुक क्षेत्र की भाषा और लोक साहित्य, जनजीवन और भाषा, जनजीवन और साहित्य, इसी प्रकार त्रिसूत्री विषय भी हो सकते हैं। जैसे भाषा, साहित्य और संस्कृति।

3) वर्णन– लोकसाहित्यानुसंधान में अगला चरण उसके वर्णन का होता हैं। सामान्य रूप से लोककला साहित्य शोध कार्य प्रकृति से विवरणात्मक या वर्णनात्मक होता है। यह विवरण यथार्थ वस्तुस्थिति का होता है। विवरण का लक्ष्य होता है किसी प्रच्छन्न यथार्थ स्थिति को प्रकाश में लाना। वर्णन यथासंभव पूर्ण हो इस बात का रखा जाना अपेक्षित हैं। वर्णन की पुष्टि के लिये सूचियो, तालिकाओं, प्रतीक चित्रों तथा मान–चित्रों का प्रयोग किया जाना चाहिए। वर्णन उचित शीर्षकों के माध्यम से भागों और उपविभागों में बंटा हुआ हो। व्यक्तिगत आग्रहों, अनुमानों और सम्भावनाओं से रहित होना चाहिए। कभी–कभी ऐसे विषय भी लिये जाते हैं, जिनमें सर्वेक्षण के साथ–साथ किसी साहित्येत्तर अनुशासन, के प्रकाश में व्याख्या की जाती है। यदि किसी क्षेत्र के लोकसाहित्य का सर्वेक्षण पहले किया जा चुका है और आधारभूत सामग्री प्रस्तुत कर दी गई है। तो उसको व्याख्या का विषय बनाया जा सकता है। सामान्य रूप से वर्णन और व्याख्या को जोड़कर चलना सुविधाजनक नहीं रहता

अपेक्षा इसके कि सर्वेक्षण वर्णन तथा व्याख्या को अलग रखा जावे। वर्णन स्वतंत्र रूप से भी हो सकता है। और वृहत्तर खंड के संदर्भ में भी जिस क्षेत्र के उपखण्ड को चुना जा रहा है, उसका संबंध क्षेत्र से जोड़ते हुए भी वर्णन किया जा सकता है। अमुक क्षेत्र के लोकसाहित्य और उसका भाषा से संबंध। यह भी ध्यान रखना चाहिये कि मात्र विवरण या वर्णन अपने आप में शोध कार्य का लक्ष्य नहीं है। उससे कुछ निष्कर्ष भी निकलने चाहिये। विवरण इस प्रकार व्यवस्थित होने चाहिये कि कुछ निष्कर्ष स्वयं निःसृत हो सके। शोधार्थी निष्कर्षों का और अधिक स्पष्ट कथन कर सकता है यदि मात्र सामग्री का संकलन करके उसका वैज्ञानिक वर्गीकरण और विवरण दे दिया जाये, तब भी यह कार्य महत्वपूर्ण नहीं है। इस कार्य करें आगे व्याख्यात्मक और विश्लेषणात्मक शोध कार्य किया जा सकता है।

अनुसंधान कर्ता को अपनी भाषा के लोकसाहित्य पर शोध कार्य करना अधिक सुविधाजनक होता है क्योंकि वह उस भाषा के बारे में अधिक जानकारी रखता है। यह जानता है कि वह बोली किस प्रकार की है। उसका आर्य–परिवार कौन सा है? अतः वह उस भाषा के लिये स्वयं भी सूचक होता है। उसका पारिवारिक वातावरण उसके अनुकूल होता है। इससे उसे सामग्री जुटाने में सहायता मिल जाती है। लोक साहित्य का वर्णनात्मक अध्ययन क्षेत्रीयकार्य पद्धति से सम्पन्न होता है। जिस विषय का शोध करना हो उसके केन्द्र में जाकर रहना आवश्यक है। उसके माध्यम के लिये शहर से दूर का क्षेत्र चुनना होगा। साथ में नगर वातावरण से दूर ग्राम में जाकर पहले तो वहाँ व्यक्तियों से मैत्री तैयार करने में भाषा, भूगोल की शोध प्रक्रिया का अवलम्बन लिया जाता है। उदाहरण यदि हम मालवी लोकगीतों पर शोध कार्य करना चाहते हैं तो सर्वप्रथम उस विषय की रूपरेखा तैयार करेंगें फिर मालवी भाषा क्षेत्र को निर्धारित करने के लिये भाषा विज्ञान की पुस्तकों, भाषा, सर्वे रिपोटों, जनगणना रिपोर्टों के आधारपर नक्शा तैयार करना होगा। और कार्य को प्रारम्भ करने के लिये ऐसे स्थान चुनना पड़ेगा जो मालवी का केन्द्र समझा जाता है।

भाषा क्षेत्र में जाकर हमें वृद्ध स्त्री पुरुषों के सम्पर्क में आना होगा। क्योंकि अधिक जानकारी रखते हैं। ग्रामवासियों में विश्वास उत्पन्न किये बिना उनसे आवश्यक सामग्री प्राप्त नहीं की जा सकती उनके गीत' टेप' करने से पहले उन्हें समझा देना चाहिये कि इससे उन्हें कोई खतरा नहीं होगा। बल्कि इससे उनकी वाणी अमर हो जायेगी उन्हें टेप बजाकर सुना भी देना चाहिये जिससे उन्हें हम पर विश्वास हो जाये। कार्य के लिये हम एक केन्द्रीय ग्राम अवश्य चुनेगे पर गीतों की प्रामाणिकता या विभेदों को जानने के लिये बीच–बीच में मालवी भाषा के अन्य ग्रामों में भी जाकर उन्ही गीतों को सुनेंगे और उस विषय में यदि कोई अन्य जानकारी मिलती है तो उन्हें भी प्राप्त कर लेंगे। इसके अलावा उसी प्रसंग पर यदि अन्य गीत भी प्रचलित हों तो उन्हें भी 'टेप' कर लेंगे।

हिन्दी में पं. रामनरेश त्रिपाठी ने उत्तरप्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में जाकर ग्राम गीतों का संगह करने में बडा श्रम उठाया था। वे अनजाने ही खेतों की मेड़ों में (ग्राम गीतों) को सुनते व लिखते जाते थे क्योंकि उस समय टेप का चलन सामान्य नहीं हो पाया था। उन्हें अपनी स्मरणशक्ति का भी सहारा लेना पड़ता था। अब अन्य टेप के द्वारा सामग्री चयन का कार्य सुलभ हो गया है।

दो भाषाओं के सन्धि क्षेत्रोंमें भी जाने की आवश्यकता होती है, क्योंकि वहाँ गीतों की भाषा–भाव में अन्तर आने की सम्भावना रहती है क्योंकि वहाँ गीतों की भाषा में अन्तर आने की सम्भावना रहती है। गीतों का संग्रह हो जाने पर उन्हें विषय या प्रसंग के क्रम से वर्गीकृत कर लेना चाहिये और उनका साहित्यिक मूल्यांकन करना चाहिये यदि सह–बोलियों जैसे कन्नौजी, ब्रज, आदि से तुलना अभीष्ट हो तो वह भी की जा सकती है। परन्तु यह हमारे द्वारा तैयार की गई रूपरेखा में निर्दिष्ट विषय सीमा पर अवलम्बित होगा।

डॉ. भागीरथ मिश्र के अनुसार "किसी भी जाति का लोकसाहित्य उसकी संस्कृति की धरोहर है। वैदिक काल से लेकर आज तक के लोकसाहित्य में हमारी जाति और हमारे समाज का स्वभाव स्पष्ट है। यह वह स्वभाव है कि जिसे बनाने में किसी ने कोई प्रर्यत्न नही किया हैं, यह वह भावना हैं जो प्राकृतिक जीवन के साथ हमारे अंतर में प्रवेश कर गई हैं। यह वह संस्कृति है जिसका शिक्षा से कोई संबंध नहीं है। फिर भी लोक साहित्य में प्राप्त संस्कृति के द्वारा हमारा जातीय बल–वैभव, आकांक्षायें, लालसायें, ह्रदय की उदारता और करूणा, अत्याचार पर असंतोष आदि भावना, प्रकृति के साथ जीवन का लगाव, पशु–पक्षियों से प्रेम, पारस्परिक, पारिवारिक, और सामाजिक व्यवहार आदि भली–भाँति स्पष्ट होते हैं। किसी भी देश का लोकसाहित्य देश की सभ्यता और संस्कृति का प्रतिबिंब होता हैं अतः समाज की सांस्कृतिक धरोहर की सुरक्षा हेतु लोक साहित्य के संरक्षण एवं संवर्धन की आवश्यकता है।

आज के भौतिकवादी युग के अभिशाप–मानसिक तनावों के मध्य पले मानव जाति के लिये लोक संस्कृति की निर्मल मंदाकिनी ही उसके मन मस्तिष्क को शांति सुख देने में समर्थ रही है।

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-I, Issues-X YEAR- June -2018

इस प्रकार हम देखते हैं कि लोक साहित्य की व्यापकता मानव के चारों और के वातावरण ओर प्रत्येक क्षण, हर कण में फॅली हुई है। लोक साहित्य का यह महत्व जानकर उसका वैज्ञानिक रूप में अधिक सुव्यवस्थित अध्ययन आवश्यक हैं। यद्यपि लोक साहित्य के अनुसंधान कार्य को पूरा करने में अत्यधिक श्रम करना पड़ता हैं परन्तु लोकसाहित्यानुसंधान प्रविधि को अपना कर लोकसाहित्यानुसंधान कार्य को सरल बनाया जा सकता हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. शोध प्रविधि – डॉ. विनयमोहन शर्मा, प्रकाशक नेशनल पेपर बैक्स, नई दिल्ली।
2. लोक साहित्य की भूमिका–डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, प्रकाशक– साहित्य भवन इलाहाबाद।
3. हिन्दी अनुसंधान– डॉ. विजयपाल सिंह प्रकाशन इलाहाबाद।
4. हिन्दी शोध तंत्र की रूपरेखा–डॉ. मनमोहन सहगत, प्रकाशक पंचशील, जयपुर।
5. शोध प्रक्रिया एवं विवरणिकाः डॉ. सरनाम सिंह– प्रकाशक आत्मा राम एण्ड सन्स नई दिल्ली।

*****